RESEARCH PAPER

RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
e-ISSN: 2455-3085 | Vol.06 | Iss.07 | July 2021 | pp. 79-83
Double-Blind Peer Reviewed/Refereed Journal

भूमंडलीय ऊष्मीकरण (ग्लोबल वार्मिंग) का जलवायु परिवर्तन पर प्रभाव

डॉ0 निधि सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर, भूगोल विभाग, आर 0 आर 0 पी0जी0 कालेज, अमेठी. उ0 प्र0

Abstract

ग्लोबल वार्मिंग दुनिया की कितनी बड़ी समस्या है, यह बात एक आम आदमी समझ नहीं पाता है। उसे ये शब्द थोड़ा टेक्निकल लगता है। इसलिये वह इसकी तह तक नहीं जाता है। लिहाजा इसे एक वैज्ञानिक परिभाषा मानकर छोड़ दिया जाता है। ज्यादातर लोगों को लगता है कि फिलहाल संसार को इससे कोई खतरा नहीं है। भारत में भी ग्लोबल वार्मिंग एक प्रचलित शब्द नहीं है और भाग–दौड़ में लगे रहने वाले भारतीयों के लिये भी इसका अधिक कोई मतलब नहीं है। लेकिन विज्ञान की दुनिया की बात करें तो ग्लोबल वार्मिंग को लेकर भविष्यवाणियाँ की जा रही हैं। इसको 21वीं शताब्दी का सबसे बड़ा खतरा बताया जा रहा है। यह खतरा तृतीय विश्वयुद्ध या किसी क्षुद्र ग्रह (एस्टेरॉइड) के पृथ्वी से टकराने से भी बड़ा माना जा रहा है।

Keywords: *ग्लोबल वार्मिंग के कारण होने वाले जलवायु परिवर्तन*

Article Publication

Published Online: 15-Jul-2021

***Author's Correspondence**

डॉ0 निधि सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर, भूगोल विभाग, आर 0 आर 0 पी0जी0 कालेज, अमेठी. उ0 प्र0

ishekhar7[at]gmail.com

10.31305/rrijm.2021.v06.i07.013

© 2021The Authors. Published by RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary. This is an open access article under the CC BY-NC-ND license (https://creativecommons.org/licenses/by-nc-nd/4.0/)

मानव जीवन और प्राकृतिक परिवेश एक दूसरे से घनिष्टतापूर्वक जुड़े है। एक की गड़बड़ी से दूसरा प्रभावित हुए बिना नहीं रहता। व्यवहार विज्ञानियों ने इन दिनों एक नए आयाम की खोज की है। उनके अनुसार समूचे संसार में फैले मानव समाज की व्यावहारिक गड़बड़ियों का एक महत्वपूर्ण कारण पर्यावरणीय असंतुलनहै। इनका मानना है कि अच्छे समाज, अच्छे आदमी के लिए जरूरी है कि प्रकृति सम्पन्न और समृद्ध हो। बात भी सही है। आजकल प्रकृति एवं समाज की पारस्परिक अंतःक्रिया इतनी व्यापक है कि उससे समूची मानव जाति प्रभावित हो रही है। पर्यावरणीय विसंगतियों का कारण औद्योगीकरण, नगरीकरण, ऊर्जा और कच्चेमाल के पारम्परिक साधनों की घटोत्तरी, प्राकृतिक असंतुलनों के विघटन, विभिन्न जानवरों व पेड़, पौधों के खानेपीने के साधनों के विनाश को बताया जाता है। स्वच्छन्द वैज्ञानिक प्रगति तथा तकनीकी सामर्थ्य ने मनुष्य को काफी ताकत दे दी है। हम पर्वतों को हटा सकते है। नदियों का मार्ग बदल सकते है। नए सागरों का निर्माण कर सकते है।

अब यह साफ जाहिर हो गया है कि मनुष्य द्वारा भौतिक चीजों के लिए प्रकृति के शोषण की शैली जीवन जीने की शैली को भी बरबाद करती है और यह ऐसे बड़े पैमाने पर होता है कि समूची मानव जाति तथा अन्य जीवधारी उसकी चपेट में आ जाते हैं। हमारा जीवन सरल, सौम्य और मृदुल बने इसके लिए जरूरी है कि हम पृथ्वी पर जीवन प्रणाली के विभिन्न तत्वों पर अपने प्रभाव को सावधानीपूर्वक देखें, समझें और सुधारें। पर्यावरण का मनुष्य की आवश्यकताओं के अनुरूप रूपांतरित करना एक सीमा तक तो ठीक है। मतलब यह कि हम प्राकृतिक जगत में काफी फेर बदल कर सकते हे। परन्तु कौन–सी फेर–बदल उचित है, कौनसी अनुचित? क्या करने से सत्परिणाम सामने आयेंगे, क्या करने से दुष्परिणाम? विनाशक प्राकृतिक शक्तियों जैसे भूकम्पों, टाइँनो, चक्रवातों, बाढ़ व सूखा, चुम्बकीय और सौरआधियों से भी संघर्ष करना पड़ेगा। परन्तु यह केवल उन नियमों के अनुसार ही किया जा सकता है जिनके द्वारा

जैवमण्डल एक अखण्ड व स्वनियामक प्रणाली के रूप में काम करता तथा विकसित होता है। आज का पर्यावरणीय सवाल महज प्रदूषण तथा मनुष्य के आर्थिक क्रियाकलापों के दूसरे नकारात्मक परिणामों तक सीमित नहीं है। यह हमारी जीवन शैली को गढ़ने से भी सम्बन्धित हैं। इसे बिना सोचे–विचार अन्धाधुन्ध भौतिक विकास ही आज धरती के अस्तिव पर खतरा पैदा कर दिया है।

ग्लोबल वार्मिंग दुनिया की कितनी बड़ी समस्या है, यह बात एक आम आदमी समझ नहीं पाता है। उसे ये शब्द थोड़ा टेक्निकल लगता है। इसलिये वह इसकी तह तक नहीं जाता है। लिहाजा इसे एक वैज्ञानिक परिभाषा मानकर छोड़ दिया जाता है। ज्यादातर लोगों को लगता है कि फिलहाल संसार को इससे कोई खतरा नहीं है। भारत में भी ग्लोबल वार्मिंग एक प्रचलित शब्द नहीं है और भाग–दौड़ में लगे रहने वाले भारतीयों के लिये भी इसका अधिक कोई मतलब नहीं है। लेकिन विज्ञान की दुनिया की बात करें तो ग्लोबल वार्मिंगको लेकर भविष्यवाणियाँ की जा रही हैं। इसको 21वीं शताब्दी का सबसे बड़ा खतरा बताया जा रहा है। यह खतरा तृतीय विश्वयुद्ध या किसी क्षुद्रग्रह (एस्टेरॉइड) के पृथ्वी से टकराने से भी बड़ा माना जा रहा है।

ग्लोबल वार्मिंग के कारण होने वाले जलवायु परिवर्तन के लिये सबसे अधिक जिम्मेदार ग्रीन हाउस गैस हैं। ग्रीनहाउस गैसें, वे गैसें होती हैं जो बाहर से मिल रही गर्मी या ऊष्मा को अपने अंदर सोख लेती हैं। ग्रीनहाउस गैसों का इस्तेमाल सामान्यतः अत्यधिक सर्द इलाकों में उन पौधों को गर्म रखने के लिये किया जाता है जो अत्यधिक सर्द मौसम में खराब हो जाते हैं। ऐसे में इन पौधों को काँच के एक बंद घर में रखा जाता है और काँच के घर में ग्रीनहाउस गैस भर दी जाती है। यह गैस सूरज से आने वाली किरणों की गर्मी सोख लेती है और पौधों को गर्म रखती है। ठीक यही प्रक्रिया पृथ्वी के साथ होती है। सूरज से आने वाली किरणों की गर्मी की कुछ मात्रा को पृथ्वी द्वारा सोख लिया जाता है। इस प्रक्रिया में हमारे पर्यावरण में फैली ग्रीनहाउस गैसों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। ग्रीनहाउस गैसों में सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण गैस कार्बन डाइऑक्साइड है, जिसे हम जीवित प्राणी अपने साँस के साथ उत्सर्जित करत हैं। पर्यावरण वैज्ञानिकों का कहना है कि पिछले कुछ वर्षों में पृथ्वी पर कार्बन डाइऑक्साइड गैस की मात्रा लगातार बढ़ी है। वैज्ञानिकों द्वारा कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन और तापमान वृद्धि में गहरा सम्बन्ध बताया जाता है। सन 2006 में एक डॉक्यूमेंट्र ीफिल्म आई– 'द इन्कन्वीनियेंट ट्रुथ'। यह डॉक्यूमेंट्री फिल्म तापमान वृद्धि और कार्बन उत्सर्जन पर केन्द्रित थी। इस फिल्म में मुख्य भूमिका में थे–अमेरिकी उपराष्ट्रपति 'अलगोरे' और इस फिल्म का निर्देशन 'डेविडगुग्न्हेम' ने किया था। इस फिल्म में ग्लोबल वार्मिंग को एक विभीषिका की तरह दर्शाया गया, जिसका प्रमुख कारण मानव गतिविधि जनित कार्बन डाइऑक्साइड गैस माना गया। इस फिल्म को सम्पूर्ण विश्व में बहुत सराहा गया और फिल्म को सर्वश्रेष्ठ डॉक्यूमेंट्री का ऑस्कर एवार्ड भी मिला। यद्यपि ग्लोबल वार्मिंग पर वैज्ञानिकों द्वारा शोध कार्य जारी है, मगर मान्यता यह है कि पृथ्वी पर हो रहे तापमान वृद्धि के लिय जिम्मेदार कार्बन उत्सर्जन है जो कि मानव गतिविधि जनित है। इसका प्रभाव विश्व के राजनीतिक घटनाक्रम पर भी पड़ रहा है। सन 1988 में 'जलवाय ुपरिवर्तन पर अन्तरशासकीय दल' (Inter Governmental Panel on Climate Change) का गठन किया गया था।

भूमंडलीय ऊष्मीकरण (या ग्लोबल वॉर्मिंग) का अर्थ पृथ्वी के वायुमंडल और महासागर के औसत तापमान में 20वीं शताब्दी से हो रही वृद्धि और उसकी अनुमानित निरंतरता है। पृथ्वी के वायुमंडल के औसत तापमान में 2005 तक 100 वर्षों के दौरान 0-74 ± 0-18 °C (1-33 ± 0-32 °F) की वृद्धि हुई है। जलवायु परिवर्तन पर बैठे अंतर–सरकार पैनल ने निष्कर्ष निकाला है कि "२०वीं शताब्दी के मध्य से संसार के औसत तापमान में जो वृद्धि हुई है उसका मुख्य कारण मनुष्य द्वारा निर्मित ग्रीनहाउस गैसें हैं। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, धरती के वातावरण के तापमान में लगातार हो रही विश्वव्यापी बढ़ोतरी को 'ग्लोबल वार्मिंग' कहा जा रहा है। हमारी धरती सूर्य की किरणों से उष्मा प्राप्त करती है। ये किरणें वायुमंडल से गुजरती हुई धरती की सतह से टकराती हैं और फिर वहीं से परावर्तित होकर पुनः लौट जाती हैं। धरती का वायुमंडल कई गैसों से मिलकर बना है जिनमें कुछ ग्रीनहाउस गैसें भी शामिल हैं। इनमें से अधिकांश धरती के ऊपर एक प्रकार से एक प्राकृतिक आवरण बना लेती हैं जो लौटती किरणों के एक हिस्से को रोक लेता है और इस प्रकार धरती के वातावरण को गर्म बनाए रखता है। गौरतलब है कि मनुष्यों, प्राणियों और पौधों के जीवित रहने के लिए कम से कम 16 डिग्री सेल्शियस तापमान आवश्यक होता है। वैज्ञानिकों का मानना है कि ग्रीनहाउस गैसों में बढ़ोतरी होने पर यह आवरण और भी सघन या मोटा होता जाता है। ऐसे में यह आवरण सूर्य की अधिक किरणों को रोकने लगता है और फिर यहीं से शुरू हो जाते हैं ग्लोबल वार्मिंग के दुष्प्रभाव। आईपीसीसी द्वारा दिये गये जलवायु परिवर्तन

के मॉडलइंगित करते हैं कि धरातल का औसत ग्लोबल तापमान 21वीं शताब्दी के दौरान और अधिक बढ़ सकता है। सारे संसार के तापमान में होन`वाली इस वृद्धि से समुद्र के स्तर में वृद्धि, चरम मौसम (extreme weather) में वृद्धि तथा वर्षा की मात्रा और रचना में महत्वपूर्ण बदलाव आ रहे है। ग्लोबल वार्मिंग के अन्य प्रभावों में कृषि उपज में परिवर्तन, व्यापार मार्गों में संशोधन, ग्लेशियर का पीछे हटना, प्रजातियों के विलुप्त होने का खतरा आदि शामिल हैं। जब तक पर्यावरण है तभी तक हम भी हैं और आप भी हैं और यह पूरी दुनिया है। पर उपभोक्तावादी संस्कृति हमारी धरती और हमारे पर्यावरण का विनाश कर रही है। हम जिस डाल पर बैठे हैं उसी को जानबूझकर काट रहे हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियों और नव–उदारवादी व्यवस्था ने भोग–विलास की जिस आदत को इतनी शिद्दत से हमारे अंदर पाला–पोसा है अब वह हमें ही नष्ट करने पर आमादा है। माना जा रहा है कि इसकी वजह से उष्ण कटिबंधीय रेगिस्तानों में नमी बढ़ेगी। मैदानी इलाकों में भी इतनी गर्मी पड़ेगी जितनी कभी इतिहास में नहीं पड़ी। इस वजह से विभिन्न प्रकार की जानलेवा बीमारियाँ पैदा होंगी।हमें ध्यान में रखना होगा कि हम प्रकृति को इतना नाराज न कर दें कि वह हमारे अस्तित्व को खत्म करने पर ही आमादा हो जाए। हमें इन सब बातों का ख्याल रखना पड़ेगा।

आज हर व्यक्ति पर्यावरण की बात करता है। प्रदूषण से बचाव के उपाय सोचता है। व्यक्ति स्वच्छ और प्रदूषणमुक्त पर्यावरण में रहने के अधिकारों के प्रति सजग होने लगा है और अपने दायित्वों को समझने लगा है। वर्तमान में विश्व ग्लोबल वार्मिंग के सवालों से जूझ रहा है। इस सवाल का जवाब जानने के लिये विश्व के अनेक देशों में वैज्ञानिकों द्वारा प्रयोग और खोजें हुई हैं। उनके अनुसार अगर प्रदूषण फैलने की रफ्तार इसी तरह बढ़ती रही तो अगल `दो दशकों में धरती का औसत तापमान 0.3 डिग्री सेल्सियस प्रति दशक के दर से बढ़ेगा। जो चिंताजनक है। तापमान की इस वृद्धि से विश्व के सारे जीव–जंतु बेहाल हो जाएँगे और उनका जीवन खतरे में पड़ जाएगा। पेड़–पौधों में भी इसी तरह का बदलाव आएगा। सागर के आस–पास रहने वाली आबादी पर इसका सबसे ज्यादा असर पड़ेगा। जल स्तर ऊपर उठने के कारण सागर तट पर बसे ज्यादा तर शहर इन्हीं सागरों में समा जाएँगे। हाल ही में कुछ वैज्ञानिक अध्ययन बताते हैं कि जलवायु में बिगाड़ का सिलसिला इसी तरह जारी रहा तो कुपोषण और विषाणुजनित रोगों से होने वाली मौतों की संख्या में भारी बढ़ोत्तरी हो सकती है।

मानव सहित सभी प्रजातियों तथा स्वयं धरती का अस्तित्व खतरे में है। शायद ही कोई तथ्यों से अवगत व्यक्ति इससे इंकार करे। तमाम आनाकानी के बावजूद चीखते तथ्यों तथा भयावह प्राकृतिक आपदाओं एंव विध्वंसों ने दुनिया को तथ्य को स्वीकार करने के लिए इस कदर बाध्य कर दिया है कि वे इस हकीकत से इंकार न करसके। इस स्थिति से निपटने के लिए, कईअंतरराष्ट्रीय सम्मेलन और संधि–समझौते हो चुके हैं। ये सम्मेलन या कार्य–योजनाएं दुनिया भर के पर्यावरणविदों तथा मनुष्य एवं धरती को प्यार करने वाले लोगों की उम्मीदों का केन्द्र रहे हैं, क्योंकि इस सम्मेलन की सफलता या असफलता पर ही मानव जाति के अस्तित्व का दारोमदार टिका हुआ था। इसी से यह तय होना था कि आने वाले वर्षों या सदियों में कौन से देश का अस्तित्व बचेगा या कौनसा देश समुद्र में समा जायेगा या किस देश का कितना हिस्सा समुद्र में डूब जायेगा, कितने देश या क्षेत्र ऐसे होगें, जिनका नामो–निशान ही नहीं बचेगा। कितनी प्रजातियां कब विलुप्त हो जाएंगी। मानव प्रजाति का अस्तित्व कितने दिनों तक कायम रहेगा। समुद्री तूफान, सुनामी या अतिशय बारिश किन क्षेत्रों को तबाह कर देगी, किस पैमाने पर जान–माल की क्षति होगी। कितने इलाके रेगिस्तान में बदल जाएंगे। बाढ़, सूखा या असमय बारिश कितने लोगों पर किस कदर कहर ढायेगी। पहले वैश्विक तापमान में वृद्धि (ग्लोबल वार्मिंग) या जलवायु परिवर्तन (क्लाइमेट चेंज) क्या ळे तथा इसके क्या परिणाम हो रहे हैं और क्या होने वाले हैं यह जानना धरती और मनुष्य जाति के अस्तित्व की रक्षा के लिए जरूरी है।

हम सभी जानते हैं कि पृथ्वी का औसत तापमान लाखों वर्षों से 15 डिग्री सेन्टीग्रेड बना रहा है। क्षेत्र विशेष में, समय विशेष पर तापमान में वृद्धि या कमी होती रहती है, लेकिन औसत तापमान स्थिर रहताहै। इसी औसत तापमान में वृद्धि को वैश्विक तापमान में वृद्धि या ग्लोबल वार्मिंग कहते हैं। चूंकि इसके चलते बड़े पैमाने पर जलवायु में परिवर्तन होता है, इसी के चलते इसे जलवाय परिवर्तन या क्लाइमेट चेंज भी कहते हैं। 1980 के दशक में इस मानव निर्मित समस्या की गंभीरता की ओर पर्यावरणविदों तथा वैज्ञानिकों का ध्यान गया। संयुक्तराष्ट्र ने इस विश्वव्यापी समस्या की गंभीरता को स्वीकार करते हुए, 1992 में पहला पर्यावरण सम्मेलन किया जिसे पर्यावरण और विकास पर संयुक्तराष्ट्र सम्मेलन नाम दिया गया। इसे पृथ्वी सम्मेलन भी कहा गया। इसी सम्मेलन में विश्व के सबसे अनुभवी समाजवादी राजनेता क्यूबा के राष्ट्रपति फिदेलकास्त्रो ने चेतावनी देते हुए कहा था कि "एक महत्वपूर्ण जैविक प्रजाति दृ मानव जाति

दृ के सामने अपने प्राकृतिक वास–स्थान के तीव्र और क्रमशः बढ़ते विनाश के कारण विलुप्त होने का खतरा है३ मानव जाति के सामने आज एक अनिश्चित भविष्य मुंहबाये खड़ा है, जिसके बारे में यदि हम समय रहते ठोस और प्रभावी कदम उठाने में असफल रहते हैं, तो धनी और विकसित देशों की जनता भी, दुनिया की गरीब जनता के साथ मिलकर एक ही जमीन पर खड़ी, अपने अस्तित्व के खतरे और अंधकारमय भविष्य से जूझ रही होगी।" उस समय, इस चेतावनी को कम करके आंका गया। लेकिन वैश्विक तापमान में वृद्धि के परिणाम विभिन्न रूपों में दुनिया में प्रकट होने लगे। एक लाख वर्षों का आइस डाटा यह बताता है कि औद्योगिक क्रान्ति से पहले वैश्विक तापमान में वृद्धि के कोई संकेत नहीं हैं। औद्योगिक क्रान्ति के बाद पृथ्वी के औसत तापमान में 0.7 सेन्टीग्रेड की वृद्धि हो चुकी है, कुछ आंकड़े इसे 1 डिग्री सेन्टीग्रेड तक बताते हैं। पर्यावरणविदों तथा वैज्ञानिकों का मानना है कि शायद थोड़े–बहुत विनाश के साथ पृथ्वी 2डिग्री सेन्टीग्रेड तक की तापमान वृद्धि को बर्दाश्त कर ले। यह अलग बात है कि इतनी भी वृद्धि तमाम भयावह एवं विध्वंसक प्राकृतिक आपदाओं को जन्म देगी। कुछ देश समुद्र के आगोश में समा जाएंगे, कुछ देशों के बड़े हिस्से तथा कुछ देशों के छोटे हिस्सों को समुद्र निगल लेगा। जब 0.7 सेन्टीग्रेड की वृद्धि पर इतनी प्राकृतिक आपदाएं घटित हो रही हैं, 2 डिग्रीसेन्टीग्रेड बढ़ने पर क्या होगा? अनुमान यह है कि यदि वर्तमान स्थिति बनी रही तो, 2200 ईस्वी तक विश्व का औसत तापमान 3 डिग्रीसेन्टीग्रेड से 10 सेन्टीग्रेड तक बढ़ सकता है। प्रति वर्ष तापमान में होने वाली वृद्धि इस आशंका की पुष्टि करती है। प्रश्न है कि तापमान वृद्धि क्यों हो रही है ? प्रकृति की अपनी एक संतुलन व्यवस्था है, इसी संतुलन के तहत लाखों वर्षों से पृथ्वी का औसत तापमान स्थिर रहा है। धरती के वातावरण का उष्मा बजट अर्थात सूर्य से आने वाली किरणों तथा धरती से उत्सर्जित होने वाली उष्मा के बीच संतुलन कायम रहा है, जिसके चलते औसत तापमान स्थिर बना रहता था। इस पूरी प्रक्रिया में ग्रीनहाउस गैसों (कार्बन डाइआक्साइड CO_2 , कार्बन मोनोआक्साइड CO, मेथेनCH_4 , नाइट्रेट्स आदि) की भूमिका निर्णायक होती है। औद्योगिक क्रान्ति के बाद जंगलों के विनाश तथा बड़े पैमाने पर जीवाश्म ईंधन (पेट्रोलियम पदार्थों, पेट्रोल तथा प्राकृतिक गैस) के इस्तेमाल के चलते ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में कई गुनी वृद्धि हो गई। एक तरफ इन गैसों का उत्सर्जन बढ़ा, तो दूसरी तरफ एक हद तक इन्हें अवशोषित करन`में सक्षम पेड़–पौधों की भारी पैमाने पर कटाई हुई। औपनिवेशिक दौर में यूरोप तथा संयुक्त राज्य अमेरिका ने एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका के जंगलों की अंधाधुंध कटाई की। बाद में यही काम इन देशों के नए शासकों ने भी किया। मुनाफे की पूंजीवादी व्यवस्था तथा उपभोक्तावाद की विश्वव्यापी जीवन–शैली जंगलों को निगलती गई। सिर्फ पिछले पचास वर्षों के दौरान 70 लाख वर्गकिलोमीटर उष्ण कटिबंधी जंगलों को काट दिया गया। वायुमण्डल में उपस्थित ग्रीनहाउस गैसों का 72 प्रतिशत कार्बनडाईआक्साइड है। 1970 की तुलना में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में 80 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इसका परिणाम यह हुआ है कि तापमान को संतुलित बनाए रखने की व्यवस्था ध्वस्त हो गई है।

वैज्ञानिकों और पर्यावरणविदों का कहना है कि ग्लोबल वार्मिंग में कमी के लिये मुख्य रूप से सी.एफ.सी. गैसों का उत्सर्जन रोकना होगा और इसके लिये फ्रिज़, एयर कंडीशनर और दूसरे कूलिंगमशीनों का इस्तेमाल कम करनाहोगा या ऐसीमशीनों का उपयोग करना होगा जिसस`सी.एफ़.सी. गैसें कम निकलती हों। औद्योगिक इकाइयों की चिमनियों से निकलने वाला धुआँ हानिकारक है और इनसे निकलने वाला कार्बन डाइऑक्साइड गर्मी बढ़ाता है। इन इकाइयों में प्रदूषण रोकने के उपाय करने होंगे। वाहनों में से निकलने वाले धुएँ का प्रभाव कम करने के लिये पर्यावरण मानकों का सख्ती से पालन करना होगा। उद्योगों और ख़ासकर रासायनिक इकाइयों से निकलने वाले कचरे को फिर से उपयोग में लाने लायक बनाने की कोशिश करनी होगी और प्राथमिकता के आधार पर पेड़ों की कटाई रोकनी होगी और जंगलों के संरक्षण पर बल देना होगा। अक्षय ऊर्जा के उपायों पर ध्यान देना होगा यानि अगर कोयले से बनने वाली बिजली के बदले पवन ऊर्जा, सौर ऊर्जा और पन बिजली पर ध्यान दिया जाए तो वातावरण को गर्म करने वाली गैसों पर नियंत्रण पाया जा सकता है तथा साथ ही जंगलों में आग लगन`पर रोक लगानी होगी।

सन्दर्भ :

1. **सवीन्द्र सिंह, पर्यावरण भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।**
2. **पृथ्वीश नाग,** Frontiers in Environmental geography
3. Noel Castree, David Demeritt, Diana Liverman, Bruce Rhoads; A Companion to Environmental Geography, John Wiley & Sons, (Google eBook)
4. William M. Marsh, Environmental Geography: Science, Land Use, and Earth Systems, John Wiley, 1996

5. e-Study Guide for: Environmental Geography : Science, Land Use, and Earth
6. https://www.google.com/search?q=global+warming&sxsrf=
7. https://climate.nasa.gov/resources/global-warming-vs-climate-change
8. https://www.nrdc.org/stories/global-warming-101